दिल्ली राज्य

बनाम

जित्ती

12 अक्टूबर 2007

[सी.के. ठक्कर और अल्तमस कबीर जे.जे.]

स्वापक औषधि और मनः प्रभावी प्रदार्थ अधिनियम, 1985

धारा 18 और 41 (2001 में संशोधित) - आरोपी के पास 45 किलोग्राम पोस्ता भूसा पाउडर पाया गया। विचारण न्यायालय द्वारा 10 वर्ष के लिए कठोर कारावास किया कि कथित न्यूनतम सजा के साथ दोषी ठहराया गया। आरोपी ने अपील दायर की। इसी बीच धारा 41 में संशोधन किया गया, संशोधित धारा 41 पर भरोसा करते हुए, अभियुक्त ने दी गई सजा की मात्रा को चुनौती दी। उसने तर्क दिया कि केवल वाणिज्यिक मात्रा की वसूली के सम्बन्ध में न्यूनतम सजा कठोर कारावास की 10 वर्ष की थी, परन्तु आरोपी से बरामद मात्रा 50 किलोग्राम से कम होने के कारण वाणिज्यिक मात्रा नहीं थी। उच्च न्यायालय ने आरोपी की सजा को पहले ही पूरी की जा चुकी अवधि तक सीमित करके रिहा करने का आदेश दिया। उच्चतम न्यायालय ने निर्णय के संचालन पर अन्तरिम रोक लगा दी। आरोपी फिर गिरफ्तार। हालांकि उच्चतम न्यायालय ने दो जमानतदारों के

साथ स्वयं का बन्धपत्र प्रस्तुत करने पर उसे जमानत पर रिहा करने का आदेश दिया। आरोपी जमानत देने में असमर्थ था, इसलिए रिहा नहीं किया गया। आरोपी पिछले लगभग 10 वर्षों से जेल में है। अपील में लंबित मामलों में संशोधित धारा 41 की प्रयोज्यता पर राज्य द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष सवाल उठाया गया। माना गया। प्रश्न पर कोई अंतिम राय व्यक्त नहीं की गई। तथ्यों के आधार पर और न्याय के हित में आरोपी को बरी कर दिया गया, क्योंकि वह पहले ही लगभग 10 वर्ष की सजा भुगत चुका था।

प्रतिवादी के पास 45 किलोग्राम पोस्त भूसा पाउडर पाया गया। विचारण न्यायालय ने उसे स्वापक औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 18 के तहत दोषी ठहराया और 10 वर्ष के लिए कठोर करावास की न्यूनतम सजा भुगतने की सजा सुनाई।

प्रतिवादी ने उच्च न्यायाल के समक्ष अपील दायर की। इस बीच अधिनियम की धारा 41 में संशोधन किया गया। संशोधित धारा 41 पर भरोसा करते हुए प्रतिवादी ने दी गई सजा की मात्रा को चुनौती दी। उसने तर्क दिया कि कठोर कारावास की न्यूनतम सजा केवल वाणिज्यिक मात्रा की वसूली के सम्बन्ध में 10 वर्ष के लिए थी, लेकिन प्रतिवादी से बरामद मात्रा 50 किलोग्राम से कम होने के कारण वाणिज्यिक मात्रा नहीं थी।

उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी की सजा को पहले ही पूरी की जा चुकी अवधि तक सीमित करके रिहा करने का आदेश दिया।

पीड़ित राज्य इस न्यायालय के समक्ष आये, जिसने फैसले के संचालन पर अन्तरिम रोक लगा दी। प्रतिवादी को फिर से गिरफ्तार कर लिया गया। हालांकि इस अदालत ने प्रतिवादी को दो जमानतदारों के साथ एक लाख रुपये के स्वयं बन्ध पत्र प्रस्तुत करने पर जमानत पर रिहा करने का आदेश दिया। प्रतिवादी जमानत नहीं दे सका और इसलिए उसे रिहा नहीं किया गया। वह पिछले करीब 10 वर्ष से जेल में है।

राज्य द्वारा प्रस्तुत किया गया था कि उच्च न्यायालय अधिनियम की धारा 41 (2001 में संशोधित) को वर्तमान मामले में लागू करने में सही नहीं था, क्योंकि धारा 41 की उपधारा (1) के प्रावधानों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह अपील में लंबित मामलों पर लागू नहीं होगा।

न्यायालय ने अपीलों का निस्तारण करते हुए माना:

तथ्यों और परिस्थितियों और तथ्यात्मक परिदृश्य की समग्रता को ध्यान में रखते हुए प्रतिवादीस/अभियुक्त लगभग 10 वर्षों से जेल में है, उच्च न्यायालय ने आंशिक रूप से उसकी अपील की अनुमती दी और उसे रिहा करने का आदेश दिया, वर्तमान अपील कथित निर्णय को चुनौती दे रही है, जो कि राज्य के द्वारा दायर की गई है, प्रतिवादी को जमानत पर रिहा नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह जमानत देने में असमर्थ था, न्याय

का उद्देश्य पूरा होगा यदि इस न्यायालय के समक्ष उठाए गए कानून के प्रश्न पर अंतरिम राय व्यक्त किए बिना अपील का निपटारा कर दिया जाता है। यह अवलोकन कि चूंकि प्रतिवादी लगभग 10 वर्ष की सजा भुगत चुका है, इसलिए उसे तब तक स्वतंत्र किया जाना चाहिए, जब तक कि किसी अन्य अपराध में उसकी आवश्यकता न हो।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1244-1245 वर्ष 2003

सी.आर.एल. ए. 1999 की संख्या 111 और 47 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के दिनांक 08.04.2002 के निर्णय और आदेश से।

अपीलकर्ता के लिए अशोक भान, वरूणा भंडारी गुगनानी और डी.एस.माहरा।

प्रतिवादी की ओर से विनय कुमार दास (ए.सी.)

न्यायालय का निर्णय सी.के. ठक्कर, जे. के द्वारा सुनाया गया।

1. ये दोनों अपीलें दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा 1999 के आपराधिक अपील संख्या 111 और 47 में पारित निर्णय और आदेश के खिलाफ दिल्ली राज्य द्वारा की गई हैं। उक्त आदेश के द्वारा, उच्च न्यायालय ने दोषी ठहराए जाने के आदेश की पुष्टि की। 14 अक्टूम्बर/21 अक्टूम्बर, 1998 के सत्र मामला संख्या 98/1996 में अतिरिक्त सत्र

न्यायाधीश, दिल्ली द्वारा सजा सुनाई, लेकिन सजा को दोषी द्वारा पहले ही बिताई गई अवधि तक सीमित कर दिया गया।

2.मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि दीदार सिंह, सर्कल इंस्पेक्टर, कांस्टेबल रामकरण के साथ 07 सितम्बर, 1996 को पेट्रोलिंग ड्यूटी पर थे, रात करीब 08ः15 बजे वे पुराने लाजपत राय मार्केट में कार पार्किंग के पास पहुंचे, वहां उन्हें गुप्त सूचना मिली कि लगभग 35-40 वर्ष की आयु के दो व्यक्ति बगीची अंगुरी बाग की ओर से आने वाले हैं और उनके पास जूट के थैले हैं, जिनमें पोस्ता भूसा पाउडर है, वे पंजाब जाने वाली बस पकड़ लेंगे। ऐसी सूचना प्राप्त होने पर एस.आई. दीदार सिंह ने पुलिस अधिकारियों और आम जनता के 4/5 व्यक्तियों के साथ एक छापेमारी दल का अयोजन किया। रात करीब 08ः35 बजे दो लोगों को पकड़ लिया गया। दोनों ने अपने सिर पर जूट के दो बैग रखे हुए थे। पूछताछ करने पर, एक आरोपी ने अपना नाम जित्ती और दूसरे ने अपना नाम विष्णुदास, पंजाब के जिला होशियारपुर के निवासी होना बताया। फिर उन दोनों को गुप्त जानकारी बताई गई और उन्हें राजपत्रित अधिकारी या मजिस्टेट की उपस्थिति में तलाशी लेने का विकल्प दिया गया। हालांकि, उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इसके बाद तलाशी ली गई। आरोपी जित्ती से 22 किलोग्राम का पोस्ता भूसा पाउडर मिला, जबकि अन्य जूट बैग से 23 किलोग्राम पोस्ता भूसे का पाउडर बरामद किया गया।

इस प्रकार कुल मिलाकर 45 किलोग्राम पोस्त भूसा पाउडर पाया गया। प्रत्येक जूट बैग से नमूने लिए गए और दो बैगों में रखे गए। बचे हुए पोस्ता भूसे के पाउडर को फिर से उन्हीं जूट के थैलों में रख दिया गया। सामान्य मुहरें लगाई गईं। इसके बाद नमूने केन्द्रीय फोरेंसिक विज्ञान प्रयोगशाला भेजे गए। परिणाम से पता चला कि नमूनों में खसखस का पाउडर पाया गया।

3. सामान्य जांच के बाद, आरोपी के खिलाफ स्वापक औषधि ओर मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 18 के तहत आरोप तय किए गए। आरोपी ने अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों के लिए दोषी नहीं होने का अनुराध किया और मुकदमा चलाए जाने का दावा किया।

4. अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, दिल्ली ने अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत गवाहों के साक्ष्य की जांच करने के बाद, 14 अक्टूबर, 1998 को दर्ज किए गएए दोषसिद्धि के आदेश द्वारा माना कि यह उचित सन्देह से परे साबित हो गया है कि अभियुक्त अधिनियम की धारा 18 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी था। इसके बाद आरोपी को सजा की अवधि पर सुना गया और आखिरकर 21 अक्टूबर, 1998 को न्यायालय ने दोषी को सजा सुनाई। आदेश का ऑपरेटिव भाग इस प्रकार पढ़ा जाता है:-

" दोषी को स्वापक औषधि और मनः प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 18 के तहत दोषी ठहराया गया है। स्वापक औषधि और मनः प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 18 के तहत अपराध के लिए कठोर सजा का प्रावधान है, जो 10 वर्ष से कम नहीं होगी और जुर्माना भी 0.79 लगाया जाएगा, जो कि एक लाख रुपये से कम नहीं होगा। स्वापक औषधि और मनः प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 18 के प्रावधानों के अनुसार, न्यूनतम सजा 10 वर्ष के कठोर कारावास और एक लाख के जुर्माने की है। न्यायालय के पास इस मामले में कोई विवेकाधिकार नहीं है, इसलिए दोषी को कठोर कारावास की सजा सुनाई जाती है 10 वर्ष के लिए और एक लाख रुपये का जुर्माना न भरने पर दो वर्ष के लिए कठोर कारावास से गुजरना होगा, पत्रावली को रिकॉर्ड रूप में भेजा जाए। "

5. विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर अभियुक्त ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दायर की। जैसा कि उच्च न्यायालय ने देखा, अभियुक्त के अधिवक्ता दोषसिद्धि के आदेश को चुनौती देने की स्थिति में नहीं थे और उन्होंने अपनी दलीलें केवल सजा के सवाल तक ही सीमित रखीं। यह प्रस्तुत किया गया कि आरोपी के पास 45 किलोग्राम पोस्ता भूसा पाउडर पाया गया। स्वापक औषधि और मनः

प्रभावी पदार्थ अधिनियम द्वारा संशोधित अधिनियम, 2001 (2001 का अधिनियम 9) द्वारा संशोधित अधिनियम की धारा 41 के प्रावधानों पर भरोसा करते हुए, यह प्रस्तुत किया गया कि संशोधित प्रावधान के अनुसार, पोस्ता भूसी के सम्बन्ध में वाणिज्यिक मात्रा 50 किलोग्राम थी। आरोपी के पास 45 किलोग्राम वजन पाया गया। इसलिए यह प्रस्तुत किया गया कि जब मात्रा वाणिज्यिक मात्रा नहीं थी, तो 10 वर्ष के लिए कठोर करावास न्यूनतम सजा नहीं थी, बल्कि अधिकतम सजा थी। यह केवल वाणिज्यिक मात्रा के सम्बन्ध में न्यूनतम सजा 10 वर्ष की थी। यह प्रस्तुत किया गया कि अभियुक्त पहले ही साढ़े पांच साल जेल में काट चुका है और उसे उचित आदेश पारित करके रिहा किया जाना चाहिए कि उसके द्वारा भुगती गई सजा पर्याप्त थी।

6. यद्यपि राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया था कि कथित प्रावधान (2001 के अधिनियम 9 द्वारा संशोधित धारा 41) अपीलमें लंबित मामलों पर लागू नहीं होगा, उच्च न्यायालय ने माना कि गिन्नी देवी बनाम मामले में एक दृष्टिकोण लिया गया था कि संशोधन अपील में लंबित मामलों पर भी लागू होगा। तदनृसार, न्यायालय ने अपील को आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया, दोषसिद्धि की पुष्टि की लेकिन अभियुक्त की कारावास की सजा को कम करके पहले ही भुगते गए कारावास में बदल दिया और निर्देश दिया कि यदि वह किसी अन्य मामले

में वांछित नहीं है तो उसे तुरन्त रिहा कर दिया जाए। इसलिए, आरोपी को उच्च न्यायालय के उपरोक्त आदेश के अनुसार स्वतंत्र कर दिया गया।

7. उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर राज्य इस न्यायालय के समक्ष आये।

8. 3 मार्च, 2003 को जब मामला सुनवाई के लिए रखा गया, तो ध्यान देने पर पाया गया कि इस न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका दायर करने में 209 दिनों की देरी हुई थी। इसलिए, देरी की माफी के लिए और विशेष अनुमति याचिकाओं पर भी नोटिस जारी किया गया था। फैसले के क्रियान्वयन पर अंतरिम रोक भी लगा दी गई और जमानती वारंट भी जारी कर दिए गए। चूंकि वारंट तामील नहीं हुए, इसिलए 7 जुलाई, 2003 को गैर जमानती वारंट जारी किए गए। उन्हें निष्पादित करने के लिए दिल्ली के पुलिस आयुक्त को निर्देश भी जारी किया गया। 8 सितम्बर, 2003, को जब मामला इस न्यायालय के समक्ष आया, तो न्यायालय ने यह नोट किया कि यद्यपि गैर जमानती वारंट जारी किए गए थे, लेकिन उन्हें निष्पादित नहीं किया जा सका। उठाए गए कदमों के सम्बन्ध में पुलिस आयुक्त की कोई रिपोर्ट दाखिल नहीं की गई है। इसलिए दिल्ली के पुलिस आयुक्त को पिछले आदेश के अनुपालन के सम्बन्ध में दो दिनों के भीतर रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश जारी किया गया। इसके बाद प्रतिवादी का पता लगाने के लिए कार्यवाही की गई और अंततः वारंट

निष्पादित किए गए। 26 सितम्बर, 2003 को विलम्ब माफ कर छुट्टी स्वीकृत कर दी गयी। चूंकि प्रतिवादी को गिरफ्तार कर लिया गया था, इसी बीच, उसे आदेश दिया गया कि विचारण न्यायालय की संतुष्टि के लिए 1,00,000/-रुपये (एक लाख रुपये) के स्वयं के बंधपत्र और इतनी ही राशि के दो जमानतदारों के साथ जमानत पर रिहा किया जाना है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी इस न्यायालय के आदेश के अनुसार जमानत नहीं दे सका और इसलिए उसकी ओर से मामले की सुनवाई करने की प्रार्थना की गई।

9. आखिरकार हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है।

10. राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय वर्तमान मामले में 2001 में संशोधित अधिनियम की धारा 41 को लागू करने में सही नहीं था। यह आग्रह किया गया कि धारा 41 कही उप धारा (1) का प्रावधान स्पष्ट रूप से स्पष्ट है और स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह अपील में लंबित मामलों पर लागू नहीं होगा। 2001 के अधिनियम की धारा 9 द्वारा संशोधित धारा 41 इस प्रकार है:-

> "41. लंबित मामलों पर इस अधिनियम का लागू होना - (1) धारा 1 की उपधारा (2) में किसी बात के बावजूद, इस अधिनियम के प्रारम्भ में अदालतों के समक्ष लंबित या जांच के तहत सभी मामलों का निपटारा इसके अनुसार किया जाएगा। इस

अधिनियम द्वारा संशोधित मूल अधिनियम के प्रावधानों और तदनुसार, किसी भी व्यक्ति को मूल अधिनियम के तहत दंडनीय किसी भी अपराध का दोषी पाया गया, जैसा कि यह इस तरह के प्रारम्भ से ठीक पहले था, उस सजा के लिए उत्तरदायी होगा, जो उस सजा से कम है जिसके लिए वह ऐसे अपराध के घटित होने की तिथि पर अन्यथा उत्तरदायी है।

बशर्ते कि इस धारा की कोई भी बात अपील में लंबित मामलों पर लागू नहीं होगी।

(2) शंकाओं को दूर करने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि किसी भी व्यक्ति की ओर से कोई भी कार्य या चूक अपराध के रूप में दंडनीय नहीं होगी जो कि यदि यह अधिनियम लागू नहीं हुआ होता तो इतना दंडनीय नहीं होता।"

11. इसलिए उन्होंने कहा कि अपील स्वीकार किये जाने योग्य है।

12. प्रतिवादी/अभियुक्त के लिए विद्वान न्याय मित्र ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करने में सही किया था। उच्च न्यायालय ने अन्य मामलों में भी इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया था। वैकल्पिक रूप से यह आग्रह किया गया कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, प्रतिवादी को लगभग 10 वर्ष के कठोर

कारावास की सजा भुगतनी पड़ी है, इसलिए प्रश्न को खुला छोड़कर अपील का निपटारा किया जा सकता है।

13. हमने विवादों पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया है, जो कि पक्षकारों द्वारा उठाए गए हैं। हालांकि, रिकॉर्ड से ऐसा प्रतीत होता है कि घटना 7 सितम्बर, 1996 को हुई थी और उसी दिन प्रतिवादी को गिरफ्तार कर लिया गया था। इस न्यायालय में दायर आपराधिक विविध याचिका संख्या 10614-10615/2007 में प्रतिवादी द्वारा शपथ पत्र के साथ कहा गया है कि वह 7 सितम्बर, 1996 से गिरफ्तारी के दिन से लेकर उच्च न्यायालय, दिल्ली द्वारा अंतिम आदेश 2 अप्रैल, 2002 के पारित होने तक जेल में था। इस प्रकार वह साढ़े पांच वर्षों से अधिक समय तक जेल में था। कथित तथ्य को उच्च न्यायालय ने भी अपील का निपटारा करते समय नोट किया है। शपथ पत्र में आगे कहा गया है कि राज्य द्वारा इस न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका दायर किये जाने के बाद उसे फिर से गिरफ्तार कर लिया गया। वी. रेंगनाथन, पुलिस उपायुक्त (मुख्यालय), आई.पी. एस्टेट, नई दिल्ली, दिनांक 10 सितम्बर, 2003 और 24 सितम्बर, 2003, ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी को 23 सितम्बर, 2003 को गिरफ्तार किया गया था। इस न्यायालय ने निस्संदेह उसे जमानत पर रिहा करने का आदेश पारित किया। हालांकि इस तथ्य के ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी जमानत की शर्तों का पालन नहीं कर सका, उसे जमानत

पर रिहा नहीं किया गया और आज तक वह जेल में है। इस प्रकार वह करीब दस वर्षों से जेल में हैं।

14. तथ्यों और परिस्थितियों और तथ्यात्मक परिदृश्य की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, अर्थात् प्रतिवादी/अभियुक्त लगभग 10 वर्षों से जेल में है, उच्च न्यायालय ने आंशिक रूप से उसकी अपील की अनुमति दी और उसे रिहा करने का आदेश दिया। वर्तमान अपील निर्णय को चुनौती देते हुए राज्य द्वारा दायर की गई है। प्रतिवादी को जमानत पर रिहा नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह अतिरिक्त शर्त प्रस्तुत करने में असमर्थ था। हमारी राय में, न्याय का उद्देश्य पूरा होगा यदि हमारे सामने उठाए गए प्रश्न पर अंतिम राय व्यक्त किए बिना, हम यह देखते हुए अपीलों का निपटारा करें कि चूंकि रेस्पाडेंट लगभग दस वर्ष की सजा काट चुका है, इसलिए उसे तब तक रिहा किया जाना चाहिए जब तक कि किसी अन्य अपराध में उसकी आवश्यकता न हो। जब भी इन अपीलों में उठाया गया प्रश्न किसी उचित मामले में विचार के लिए आएगा, तो उसका निर्णय उसके गुणदोष के आधार पर किया जाएगा।

15. पूर्व में पारित आदेश के परिप्रेक्ष्य में अपील एवं फौजदारी 2007 के विविध याचिका संख्या 10614-10615 का निस्तारण किया जाता है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी ओम प्रकाश नायक (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।